जैसलमेर का यात्रा वृत्तान्त तुम्हें दो लोग सुना रहे हैं: शैहला हाशमी और मिहिर। इसी यात्रा के कुछ और मज़ेदार किस्से अगले अंक में पढ़ोगे।

शैहला हाशमी

जैसलमेर

एक सुनहरा शहर

फोटोः मिहिर

आज से कोई तीस साल पहले सत्यजीत राय की फिल्म *शोनार किला* देखी थी। जैसलमेर का किला देखने की मंशा तभी से घर कर गई। तो इस बार मौका मिला तो बोरिया-बिस्तर लपेट जैसलमेर निकल पड़ी।

दिल्ली-जैसलमेर एक्सप्रेस साढ़े चार घण्टे देरी से पहुँची। गाड़ी में पैंट्री कार नहीं है यह हमें गाड़ी में बैठने के बाद ही पता चला था। घर से लाया खाने-पीने का सामान पिछली रात ही खत्म हो चुका था। भूखे-प्यासे आर.टी.डी.सी. के गेस्ट हाऊस मूमल पहुँचे। सोच रहे थे कि कुछ खा-पीकर घूमने निकलेंगे। अब तक घर से निकले 24 घण्टे हो चुके थे। लेकिन किस्मत अपनी – यहाँ भी कुछ नहीं मिला! पता चला कि यहाँ लंच के बाद सीधा डिनर परोसने का रिवाज़ है। खैर नहा धोकर जीप में बैठ घूमने निकल पड़े। शहर का भूगोल समझने की कोशिश की। रात के 8 बजते-बजते जब मूमल पहुँचे तब तक भोजन का ऐलान हो चुका था। खाना सामने देख मूमल के अतिथि सत्कार को जी भर कर सराहा और फुर्ती से थाली खाली कर डाली।

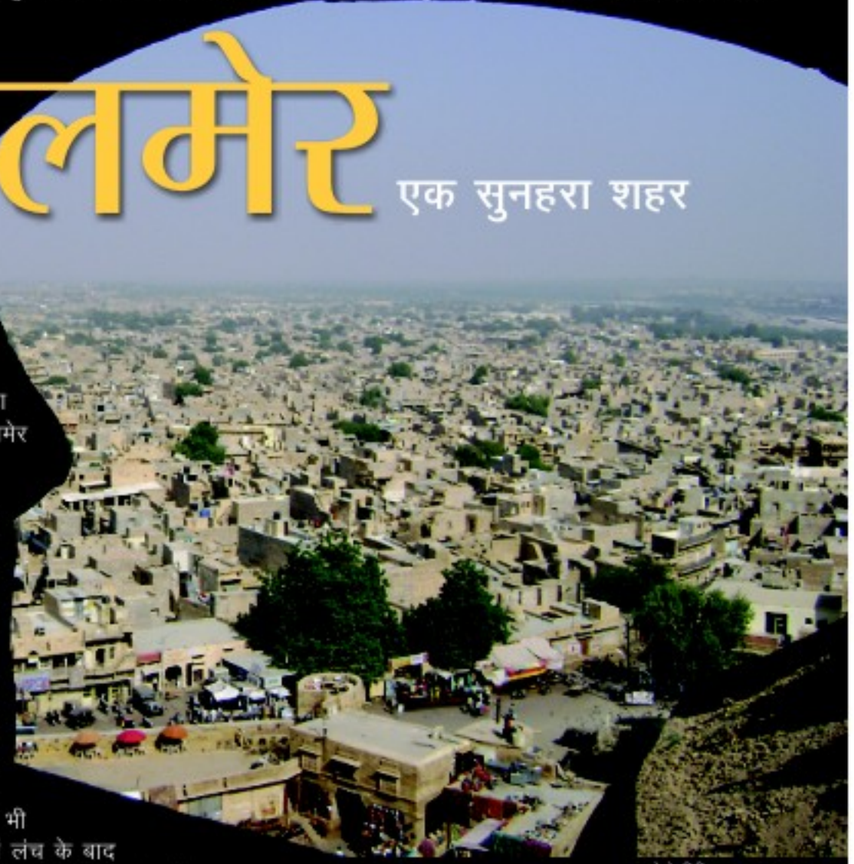

अगले दिन सुबह-सवेरे जैसलमेर की सैर को निकले।

फोटोः मिहिर

पश्चिमी राजस्थान में अन्तर्राष्ट्रीय सीमा के पास थार की मरुभूमि में स्थित जैसलमेर उत्तर भारत के हिसाब से एक छोटा शहर ही माना जाएगा। यहाँ ज़ोरदार गर्मी पड़ती है। तापमान 48 डिग्री सेंटीग्रेड से भी ऊपर पहुँच जाता है और बारिश न के बराबर होती है – 16 सें. मी.। यहाँ की जलवायु काफी गर्म और शुष्क है।

इस सुन्दर शहर की स्थापना सन् 1156 ई. में राव जैसल ने की थी। यहाँ के शासकों का आमदनी का ज़रिया था – दिल्ली की ओर जाते गरम मसालों के कारवाँ से ज़बरदस्ती लगान वसूलना और आसपास के किलों पर हमला कर लूट-खसोट करना। इस तरह व्यापारियों और शासकों दोनों के वारे-न्यारे हुआ करते थे। जमा दौलत सुन्दर महल-हवेलियाँ बनाने और उनमें अनमोल चीज़ें जमा करने में खर्च की जाती थी। दूर-दराज और दुर्गम इलाके में होने की वजह से खुद जैसलमेर बाहर के हमलों से बचा रहा।

शोनार किला

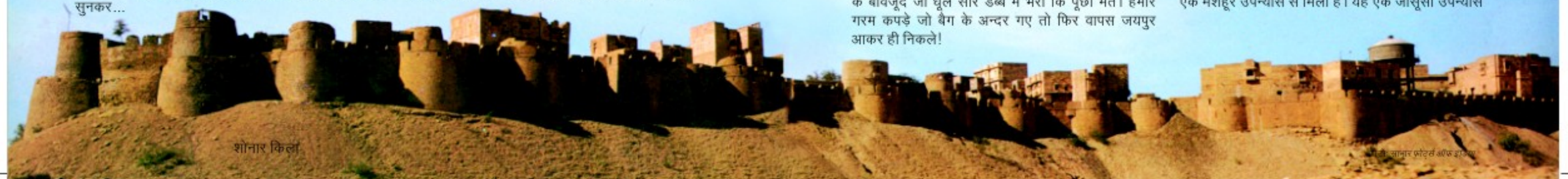

रंगीन इतिहास वाली इस खूबसूरत, सुनहरी नगरी में देशी-विदेशी सैलानियों का ताँता लगा रहता है। किला कोई 100 फुट ऊँची पहाड़ी पर बना है और दूर से ही नज़र आ जाता है। इस शानदार किले की दीवारों और उसकी आकृति से मज़बूती और भव्यता झलकती है। इसकी बनावट भी अनोखी है। इसको बनाने में चूने-गारे का इस्तेमाल नहीं किया गया है। पत्थर के बड़े-बड़े चौरस टुकड़ों को बॉल और सॉकेट जोड़ के ज़रिए जोड़ा गया है। मेरे ख्याल से पानी की कमी की वजह से इस तकनीक का इस्तेमाल किया गया होगा। एक और चीज़ पर मेरा ध्यान अटका – इस किले पर काई के काले निशान नज़र नहीं आते हैं जो आमतौर पर पुरानी इमारतों और किलों पर दिखते हैं। इसका कारण भी शायद बारिश की कमी ही हो। कारण कुछ भी हों पर शोनार किला आज भी खूब चमकता हुआ, साफ और पीला दिखाई देता है – शायद 8 सौ साल पहले जैसा ही। यह किला एक खास तरह के पीले बलुआ पत्थर (सैंड स्टोन) का बना है जो जैसलमेर में ही पाया जाता है।

इस किले की मज़बूत चारदीवारी के बीच महल, हवेलियाँ, रिहायशी बस्तियाँ, जैन मन्दिर, बाज़ार सभी कुछ हैं। आधुनिक संचार साधन तक इस किले में मौजूद हैं। किले के भीतर एक साईबर कैफे के मालिक ने बताया कि यह दुनिया का अकेला किला है जहाँ अभी भी आबादी है। जो परिवार पुराने ज़माने से जहाँ बसे थे वहीं कई पीढ़ियों से रह रहे हैं (वैसे कम से कम भारत में तो कई किले-महल हैं जहाँ सालों-साल से लोग रह रहे हैं।)। साईबर कैफे के इस

मिहिर

जैसलमेर की यात्रा और सिर्फ तीन दिन का समय... बहुत कम है दोस्तो। लेकिन पिछली दिवाली में मेरी इस 20-20 ओवर के मैच जैसी जैसलमेर यात्रा में मुझे ऐसे कई किस्से मिले जो हमेशा याद रहेंगे। इनमें से कुछ मज़ेदार किस्से यहाँ तुम्हारे साथ बाँट रहा हूँ। उम्मीद है तुम्हें भी मज़ा आएगा इन्हें सुनकर...

जयपुर से चले थे रात में। रेलगाड़ी में रात को ओढ़ने-बिछाने का सारा इन्तज़ाम साथ लेकर। सुबह जोधपुर तक तो सब ठीक था। उसके बाद जैसे-जैसे रेल का आगे का सफर शुरू हुआ एक-एक करके हमारे गरम कपड़े उतरने लगे। मुझे बचपन में देखी सत्यजीत राय की फिल्म *गुपी गाईन, बाघा बाईन* याद आ गई। इस फिल्म में भी अचानक ठण्डे देश से गरम प्रदेश में पहुँच जाने पर गुपी और बाघा ऐसे ही अपने गरम कपड़े उतारते हैं। दोपहर में रेल के रास्ते में ही धूल का तूफान आया। सारी खिड़कियाँ बन्द कर लेने के बावजूद जो धूल सारे डब्बे में भरी कि पूछो मत। हमारे गरम कपड़े जो बैग के अन्दर गए तो फिर वापस जयपुर आकर ही निकले!

जैसलमेर रेलवे स्टेशन आने से कुछ पहले ही मशहूर शोनार किला (सोने का किला) दिखने लगता है। तुम्हें पता है इस किले को यह नाम सत्यजीत राय के इस नाम से लिखे एक मशहूर उपन्यास से मिला है। यह एक जासूसी उपन्यास

शोनार किला

किले की एक गली

फोटोः मिहिर

नौजवान ने अपनी कमीज़ पर "नो वॉर" का बिल्ला लगा रखा था। देखकर अच्छा लगा कि इतने दूर-दराज के इलाकों में भी लोग ईराक पर अमरीका के नाजायज़ हमला करने के खिलाफ आवाज़ उठा रहे हैं।

किले के भीतर रहने वाले लोगों को पर्यटकों के आने से काफी फायदा पहुँचा है। छोटी-छोटी, पतली, बलखाती गलियों में राजस्थानी कढ़ाई व छपाई की चादरें, शीशे का काम, तैयार कपड़े, थैले, चाँदी के ज़ेवर, काँसे की मूर्तियाँ, नग, ऊँट की खाल के बैग, टोपियाँ... और भी बहुत कुछ मिलता है। इनको खरीदने से पहले खरीदने की कला सीखना ज़रूरी है। यहाँ दाम कहीं के कहीं तक हो जाते हैं।

हमारे आगे-आगे एक अधेड़ जैसलमेरी इटालवी में बोलते हुए अपने विदेशी मेहमानों को किले की सैर करा रहा था!

शहर जैसलमेर

किले के चारों ओर काफी दूर तक जैसलमेर फैला हुआ है। यहाँ काफी पुरानी हवेलियाँ और मकान हैं। साथ ही यहाँ एक आधुनिक शहर की सभी सहूलियतें भी हैं – पेट्रोल पम्प, बैंक, स्कूल, रेस्तराँ, होटल, बाज़ार, डाकघर और बहुत कुछ। शहर की छोटी-छोटी गलियों, बाज़ारों में ज़िन्दगी अपनी रफ्तार से चलती है। साइकिल, स्कूटर, तिपहिया, गाड़ियाँ सभी दौड़ी-फिरती हैं। लगता ही नहीं कि हम मरुभूमि के बीचों-बीच बैठे हैं!

इस आधुनिकता और विकास के बावजूद जैसलमेर के भवन-निर्माण में मुझे एक सहजता और समानता नज़र आई। नए मकान नए ढंग से बनने के बावजूद बाहर से पुराने मकानों और हवेलियों से अलग नहीं लगते। जालियाँ, झरोखे व सुन्दर मुख्य द्वार आज भी बनाए जाते हैं।

पूरे किले और शहर में पीले पत्थरों पर की गई नक्काशी देखते ही बनती है। कैसे किया होगा इतना बारीक काम? सुन्दर महीन जालियाँ, झरोखे, महराबें हैरान कर देते हैं। इन्हें बनाने वाले अनाम कलाकारों के लिए मन में इज़्ज़त

रोहिडाः राजस्थान का राज्य-पुष्प और बीकानेरी टीक नाम से मशहूर। इसकी लकड़ी से फर्नीचर बनाए जाते हैं।

बढ़ने लगती है। हिन्दुस्तानी और ईरानी भवन निर्माण कला का अनोखा मेल जैसलमेर की इन हवेलियों में हमें देखने को मिला। एक ओर पत्थरों पर तरह-तरह की मूर्तियाँ हैं वहीं दूसरी ओर महराबें, ज्यामितीय डिज़ाइन और गुम्बद वाली छतरियाँ भी हैं। हमारी मिली-जुली विरासत और संस्कृति का नमूना!

आजकल की तरह उन दिनों भी इमारत बनाने की मुख्य ज़िम्मेदारी वास्तुकार की हुआ करती थी। उसे गजधर कहा जाता था। एक माप के पत्थरों को कटवाना, उन पर रंगों से डिज़ाइन बनवाना और फिर सिलवाटा (पत्थर पर छैनी हथौड़ी से खुदाई करने वाले) से जालियाँ व मूर्तियाँ बनवाना – अपनी निगरानी में ये सभी काम गजधर ही करवाता था।

पटवों की हवेली

इस छोटे-से शहर में कुछ भी देख पाना मुश्किल नहीं है। एक स्कूटर वाले से बात पक्की कर ली। उसने न सिर्फ हवेली घुमाई बल्कि एक अच्छे गाईड की तरह कई मज़ेदार बातें भी बताईं। शहर की छोटी-छोटी गलियों में से होते हुए हम पटवों की हवेली के सामने पहुँच गए।

सन् 1800 से 1860 के दौरान पाँच व्यापारी भाइयों ने ये बेहद खूबसूरत हवेलियाँ बनवाई थीं। पटवों का व्यापार चीन, सिंध और अफगानिस्तान तक फैला हुआ था। सोना, चाँदी, गरममसाले, अफीम, नील आदि बेचकर उन्होंने काफी सारा धन कमा लिया था। उदयपुर और जैसलमेर की रियासतों को उधार तक देने की ताकत थी उनकी। अपनी अथाह दौलत का बहुत बड़ा हिस्सा उन्होंने इन हवेलियों पर खर्च किया होगा।

किले में बने जैन मन्दिर का एक हिस्सा

फोटोः मिहिर

समय के साथ भीतर की काफी चीज़ें खराब हो रही हैं। रिहायशी इलाके में फर्श मिट्टी के बने हैं, शायद ठण्डा रखने के लिए। भीतर की छत लकड़ी की है और उस पर खूबसूरत बेल-बूटे बने हुए हैं। इन पर सोने का पानी चढ़ा है जो अब फीका पड़ गया है। कमरों के दरवाज़े मोटी लकड़ी के हैं। उन पर भी लोहे की पत्ती से बेल-बूटे बने हुए हैं। इन दीवारों में धन छिपाने के लिए चोर तिजोरियाँ भी हैं। एक और कमाल की बात पता चली कि इन हवेलियों में भी चूने या सीमेंट का इस्तेमाल नहीं किया गया है। पत्थर को पत्थर से जोड़कर बनाया गया है। सीढ़ियों और छज्जों आदि में मज़बूती के लिए लोहे का क्लैम्प दो पत्थरों को जोड़े रखता है। इस लोहे में कहीं जंग आदि नज़र नहीं आया। वाकई काबिले तारीफ बात है।

था जिसमें सत्यजीत राय द्वारा रचित जासूस फेलूदा एक उलझी गुत्थी सुलझाने पूरा भारत पार करते हुए कलकत्ता से जैसलमेर आता है। उपन्यास में जैसलमेर के रास्ते में आने वाली कई जगहों का भी ज़िक्र आता है। इसीलिए पोखरण और रामदेवरा से गुज़रते हुए मुझे कई बार *सोनार किला* की याद आई। अगले दिन हम इस किले को देखने गए।

सोनार किला एक मज़ेदार जगह है। किला होने के बावजूद इसके भीतर बड़ी संख्या में परिवार रहते हैं। इन परिवारों के लिए आने वाले पर्यटक ही उनकी रोज़ी-रोटी हैं। किले के अन्दर एक लाइन से दुकानें सजी हैं। इनमें सजावटी सामानों से लेकर खूबसूरत कपड़ों तक सब मिलता है। एक जगह तो इतनी रंग-बिरंगी जूतियाँ सजी थीं कि मुझे होली के रंग याद हो आए। जब मैं तस्वीर लेने के लिए किसी खूबसूरत दुकान के बाहर रुकता तो अचानक कई आवाज़ें मुझे भीतर बुलाने लगतीं! एक दुकान के बाहर मैंने लिखा देखा, "थैंक यू लोनली प्लैनेट फॉर मेकिंग अस अनइम्प्लॉइड" (हमें बेरोज़गार बनाने के लिए लोनली प्लैनेट तेरा शुक्रिया)। पता चला कि दुनिया भर में चर्चित पर्यटक गाइड *लोनली प्लैनेट* में किसी ने इस जगह के बारे में कुछ खराब लिख दिया है। इसलिए विदेशी पर्यटकों का यहाँ आना कम हो गया है। भई वाह, जैसलमेर के व्यवसायियों का गुस्सा दिखाने के इस अन्दाज़ की क्या बात है!

दुनिया सच में बहुत छोटी है दोस्तो! देश के इस सुदूरवर्ती पश्चिमी ज़िले में हमें "दुनिया की छत" तिब्बत से आए दोस्त भी मिले। ये लोग किले के अन्दर ही एक रेस्तराँ चलाते हैं जिसका नाम है – फ्री तिब्बत रूफ टॉप रेस्टोरेंट। अब कहाँ तिब्बत की बर्फ और कहाँ जैसलमेर की तेज़ गरमी... लेकिन काम की तलाश क्या-क्या नहीं करवाती। और फिर पेट भर खाना, सर ढँकने को छत मिल जाए तो परदेस भी घर हो जाता है।

शाम को हम सम देखने गए। सम यानी असली रेगिस्तान। यह जगह जैसलमेर शहर से कोई 20-30

फोटोः सी. एन. सुब्रह्मण्यम्

फोटोः मिहिर

काम की और काज की, गुल्लक अनाज की

बकरी के बालों से बुनाई

कुएँ में पानी कित्ता-कित्ता

इन हवेलियों का भीतरी रिहायशी हिस्सा बहुत ही छोटा और अँधेरा था। कमरे काफी छोटे-छोटे थे। फरवरी के महीने में भी अन्दर काफी घुटन महसूस हो रही थी जबकि बाहर मौसम अच्छा था। इसमें खुला आँगन या बारामदा भी नहीं था। अपना सारा जीवन घरों में बिताने वाली औरतों के बारे में सोच कुछ बेचैनी होने लगी और बच्चे कहाँ खेलते होंगे?

आज इन पाँच पटवा हवेलियों में से तीन पुरातन विभाग के पास हैं। एक हवेली निजी हाथों में है एक गैलरी और दुकान की तरह इस्तेमाल होती है। यहाँ के एक कारिन्दे ने बताया कि इस हवेली को भीतर के सारे सामान समेत ही खरीद लिया गया था। क्योंकि पुरातन विभाग के नियमों के तहत यहाँ की सारी चीज़ें राष्ट्रीय धरोहर हैं और कुछ भी बाहर नहीं निकाला जा सकता। इसीलिए यह एक गैलरी में बदल दी गई है।

पानी पिलाता गधा

सभी फोटोः सी. एन. सुब्रह्मण्यम्

जारी...

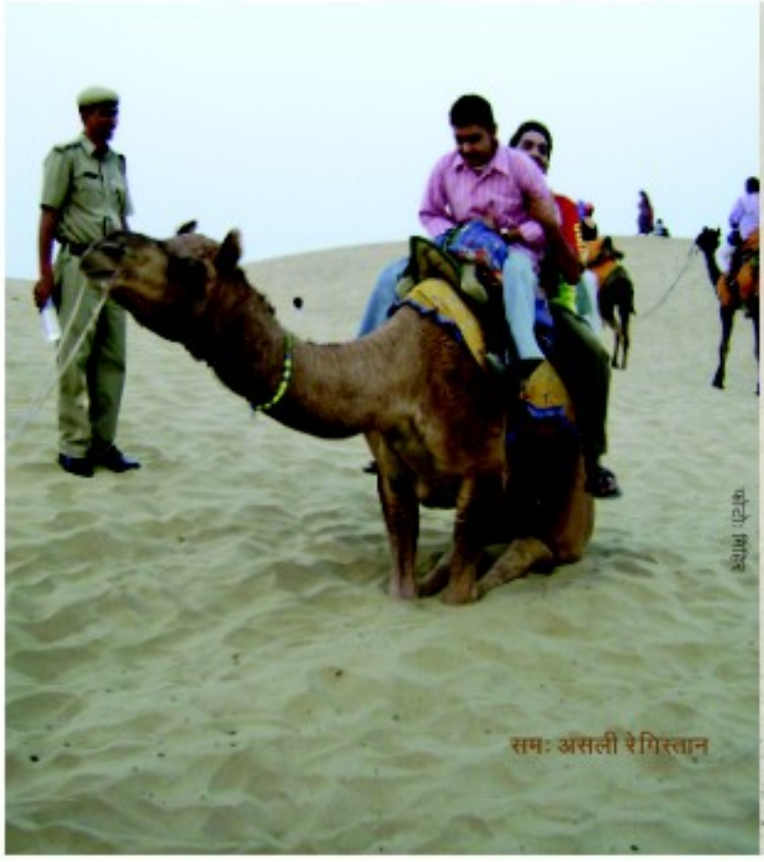

समः असली रेगिस्तान

किलोमीटर दूर होगी। रेत के दूर-दूर तक फैले टीलों को देखने और ऊँट की सवारी करने यहाँ बहुत लोग आते हैं। हम जिस ऊँट पर बैठे उसका नाम माईकल था। मुझे डर लगा कि कहीं इसने माइकल जैक्सन की तरह नाचना शुरू कर दिया तो हमारा क्या होगा! लेकिन माइकल एक सीखा हुआ ऊँट था। उसने हम नौसिखिए लड़कों को ज़रा भी परेशानी नहीं होने दी। हमें लगता रहा कि हम उसे चला रहे हैं लेकिन दरअसल वो हमें घुमा रहा था। उसके मालिक उसे जैसा कहते वो वैसा ही करता। वो अपने मालिक की आवाज़ से ही समझ जाता था कि कब उठना है, कब चलना है। यह एक मज़ेदार अनुभव था।

एक है सवा नाः सवाना घास जिसे खाती है बकरी और उसके दूध से बनती है स्वादिष्ट बीकानेरी मिठाई।

जारी...